श्रावण शुक्ल ३, गुरुवार, दिनांक-२६-०७-१९७९
गाथा-३०८-३११, प्रवचन-६

समयसार, (गाथा) ३०८ से ३११। क्रमबद्ध की व्याख्या आयी न? क्रमबद्ध में पर का कारण-कार्य का अभाव होता है। विशेष स्पष्टीकरण अताा है। उसका कारण वह है। क्या? कि **जीव अपने परिणामों से उत्पन्न होता है...** यह क्रमबद्ध में से निकाला। जब **जीव अपने परिणामों से उत्पन्न होता है...** क्रमबद्ध में उसका निश्चय (-निर्णय) जाता है ज्ञायक पर। यह बात यहाँ है। ज्ञायक पर दृष्टि हुई तो जीव अपने परिणामों के साथ तादात्म्य है। आहाहा! **इस प्रकार जीव अपने परिणामों से उत्पन्न होात है...** निगोद से लेकर सिद्ध, एक-एक समय के परिणाम... निर्मल की यहाँ बात है, हों! अपने परिणाम से जीव उत्पन्न होता है। आहाहा! परिणाम से उत्पन्न (होता है)। जीवद्रव्य तो है ही। **परिणामों से उत्पन्न होता है, तथापि...** ऐसे क्यों कहा? कि अपने परिणामों से तो उत्पन्न होता है न? इतना तो कार्य करता है न? अपने परिणामों से उत्पन्न होता है न? नहीं उत्पन्न होता, ऐसा तो है नहीं।

उसका अजीव के साथ कार्यकारणभाव सिद्ध नहीं होता... ऐसा कि अपने परिणाम से उत्पन्न होता है, तो पर का परिणाम भी करे। जो उत्पन्न न होता हो, कार्य न होता हो, तब तो पर का कार्य न करे। आहाहा! कार्य तो करता है। सूक्ष्म बात है। जीव अपने निर्मल परिणाम का कार्य तो करता है, तथापि पर का कार्य नहीं करता—ऐसा लेना है। समझ में आया? गम्भीर शब्द है कि अपने परिणामों से उत्पन्न होता है तथापि—तो भी... निर्मल परिणाम से तो उत्पन्न होता है। मैं शुद्ध चैतन्यघन ज्ञान आनन्दकन्द प्रभु हूँ, उसका (-मेरा) परिणाम तो आनन्द और शान्ति, यह उसका परिणाम है। यहाँ धर्म प्राप्त करने की बात चलती है अथवा क्रमबद्ध का जिसको निर्णय हुआ, उसकी बात चलती है। आहाहा!

जगत में प्रत्येक पदार्थ की अपनी अवस्था से व्यवस्थित व्यवस्था होती है। प्रत्येक पदार्थ की अपने परिणाम—अवस्था से व्यवस्था होती है। दूसरा परिणाम उसको करे तो उसकी पर्याय—व्यवस्था होती है, ऐसा है नहीं। तो यह सब व्यवस्थापक है न?

नहीं? यह प्रमुख है, व्यवस्थापक है। किसका व्यवस्थापक? भाई! जो द्रव्य अपने परिणाम से उत्पन्न होता है क्रम में, तो उसकी पर्याय की व्यवस्था, वही उसकी व्यवस्था है। आहाहा! दूसरा जीव उसकी व्यवस्था करे? दूसरा जीव भी अपने निर्मल परिणाम से उत्पन्न होता है, तो वह अपने परिणाम से उत्पन्न हो और दूसरे के भी परिणाम उत्पन्न करे—ऐसा नहीं होता।

तथापि... 'तथापि' लिया है। ऐसा कि अपना कार्य करे न? करता तो है या नहीं? करता है या नहीं? पलटता है या नहीं? तो फिर दूसरे को भी पलटावे। कहते हैं कि ऐसा होता नहीं। क्योंकि दूसरा द्रव्य भी अपने परिणाम से परिणमित होता है। दूसरा द्रव्य कोई पर्याय बिना का द्रव्य है, ऐसा द्रव्य है नहीं। आहाहा! (उसकी) पर्याय का कार्य करनेवाला कोई एक द्रव्य-परद्रव्य है, तो उसकी पर्याय का कार्य दूसरा जीव करे, ऐसा कभी होता नहीं। आहाहा! यह सब सेठिया धन्धा करे, व्यापार करे दुकान में धड़ाधड़। क्या करे? कर्ता होना तो मरना है। मैं करूँ... भगवान ज्ञायकस्वरूप प्रभु को राग का, पर का काम सोंपना... आहाहा! यह तो प्रभु की मृत्यु है अथवा उनका अनादर है। अनादर है, वह ही मृत्यु है। आहाहा! यह सब व्यापार करते हैं लोहे का। आहाहा! दो-दो करोड़ का स्टील (पड़ा था), उसमें भाव बढ़ गया तो चालीस लाख पैदा हो गये, लो। प्रसन्न होगा या नहीं?

वह पर्याय तो परमाणु, वहाँ क्रमबद्ध में आनेवाला परमाणु आया है, उसकी पर्याय के क्रमबद्ध में। दूसरे के कारण से पैसा आया वहाँ...

मुमुक्षु : उनके ही पास आया, दूसरे के पास नहीं आया?

पूज्य गुरुदेवश्री : उसके पास आया, वो तो उस समय कार्य की दशा और काल ही ऐसा था। पूर्व का पुण्य कहने में आया, वो पुण्य तो निमित्त है। पूर्व का पुण्य पैसे को खींचकर लावे—ऐसा है नहीं। बोलने में आता है कि उसके पुण्य के कारण से... शास्त्र भी ऐसा कहता है कि पुण्य का फल मिलता है।

पद्मप्रभमलधारिदेव भी कहते हैं कि प्रभु! दूसरे की ऋद्धि देखकर तुझे विस्मय होता है और तुझे इच्छा होती है कि आहाहा! करोड़पति, अरबपति, मैं भी होऊँ। तो

प्रभु! ये अरिहन्त की भक्ति कर तो उसमें पुण्य होगा और उससे मिलेगी वस्तु। तेरे को मिलेगी तो भी तुझे क्या लाभ है? आहाहा! तू तो भगवान आत्मा सच्चिदानन्द प्रभु है, जिसमें अनन्त-अनन्त निर्मल गुण की खान है। इस खान की प्रतीति जिसको क्रमबद्ध के परिणाम में हुई... आहाहा! ये तो अपने परिणाम से उत्पन्न होता है। क्यों? कि प्रत्येक जीवद्रव्य में कर्ता नाम का एक गुण है... कर्ता नाम का गुण है। तो कर्ता होकर अपने परिणाम का कर्म अर्थात् कार्य करता है। आहाहा! कर्ता होकर... अपने निर्मल परिणाम की बात है, हों!

सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र... क्रमबद्ध के निर्णय में ज्ञायक पर दृष्टि होने से सम्यग्दर्शन-ज्ञान हुआ, इस सम्यग्दर्शन के कार्य का कर्ता कौन है। कि जीव में कर्ता नाम का गुण है। उस कर्ता (गुण) के कारण से सम्यग्दर्शन की पर्याय उत्पन्न हुई है। पूर्व की पर्याय से नहीं, निमित्त से नहीं, सुनने से नहीं। आहाहा! बहुत मंथन किया विकल्प से अन्दर, तो उससे प्राप्त होता है, ऐसा है नहीं। आहाहा! मंथन है, वह तो सब विकल्प है। आहाहा! अपने में कर्ता नाम का अनादि गुण है, उस कर्तागुण के कारण से उसकी सम्यग्दर्शन आदि पर्याय उत्पन्न होती है।

अथवा कर्म नाम का गुण है आत्मा में। ओहोहो! एक जड़कर्म है, एक नोकर्म है, एक राग का कर्म है, एक निर्मलपर्यायरूपी भावकर्म है, निर्मल... आहाहा! और एक कर्म नाम का गुण आत्मा में है। आहाहा! क्या कहा? आत्मा के अतिरिक्त अनन्त पदार्थ का कार्य होता है, यह भी उसका कर्म है। यह कर्म, पदार्थ और अपना परिणाम किया, यह परिणाम उसका कार्य है। कार्य कहो या कर्म कहो। एक बात। दूसरी— जड़कर्म है, उसको कर्म कहना, परमाणु अपनी पर्याय से कर्मरूप परिणमा है, यह भी कर्म है।—दो। तीसरा—राग-द्वेष का परिणाम करना यह भी एक कर्म है, भावकर्म। तीन। एक निर्मल परिणाम(रूप) कार्य हो, यह भी कर्म है—चार। और एक कर्म नाम का गुण आत्मा में है। आहाहा!

सूक्ष्म बात है, भाई! अरे रे! अनन्त काल में सत्य बात मिली नहीं (और) मिली तो रुचि नहीं। आहाहा! एकान्त... एकान्त लगे। व्यवहार... कुछ-कुछ राग की मन्दता

करने से होता है या नहीं? तो कहते हैं कि उसके कर्म नाम के गुण ने क्या किया? राग से जो हुआ, तो राग कर्ता, आहाहा! समझ में आया? और धर्मपर्याय कार्य (हुई) तो यह राग कर्ता (और धर्मपर्याय) कार्य (हो) तो कर्ता नाम के गुण का कार्य क्या है? आहाहा! बहुत सूक्ष्म बात है। मुद्दे की बात को उसने कभी दृष्टि में लिया नहीं। आहाहा! यहाँ कहते हैं कि कर्म इतने प्रकार का है। आहाहा! एक गुणरूपी कर्म, एक निर्मल पर्यायरूपी कर्म, एक रागरूपी भावकर्म, एक (द्रव्य) कर्मरूपी पर्याय जड़ की और एक पर के परिणामरूपी कर्म। आहाहा!

पर का कर्म आत्मा करता है या नहीं? कर्म का परिणाम जो है, उसको भी आत्मा करता नहीं और राग है, वह भी आत्मा का कर्तृत्व नहीं और निर्मल पर्याय का कर्ता है, वह भी उपचार से है। आहाहा! निर्मल परिणाम अपना कार्य और आत्मा कर्ता—ऐसा भी उपचार से—व्यवहार से कहने में आता है। कलशटीका में है। कलशटीका में है सब। समझ में आया? आहाहा! यहाँ तो कहते हैं कि आत्मा में कर्म नाम का गुण है... कर्म नाम का गुण है। जड़कर्म का नहीं, राग का नहीं, पर्याय का नहीं। आहाहा! जैसे भगवान आत्मा ज्ञानस्वभावी त्रिकाल है, आनन्दस्वभावी त्रिकाल है, ऐसे कर्मस्वभावी त्रिकाल है। आहाहा!

यअ सब सुना न हो, वहाँ पैसे-पैसे में न सुना हो। मन्दिर में आठ लाख खर्च किया, इसलिए धर्म हो गया (ऐसा माने), परन्तु पैसा खर्च सकता ही नहीं आत्मा। वह परमाणु की पर्याय का कार्य तो परमाणु का है, दूसरे का वह कार्य है ही नहीं। आहाहा! और यह पैसे के कार्य से मन्दिर का कार्य होता है, ऐसा भी नहीं।

मुमुक्षु : किसी का उपकार गिनता ही नहीं।

पूज्य गुरुदेवश्री : यह तो सब व्यवहार की बातें हैं। आहाहा! 'उपकार' आता है न? भाई ने लिया है न मोक्षमार्गप्रकाशक में आठवें अध्याय में? अरिहन्त ने उपकार किया है उपदेश देकर, मैं ये उपकार का... उल्लेख करता हूँ। आठवें अध्याय में है। मोक्षमार्ग प्रकाशक। खबर है न! आहाहा! हम उपकार करते हैं, ये तो निमित्त से कथन है। समझ में आया?

अभी तो बहुत चलता है न? यह चौदह ब्रह्माण्ड का नक्शा बनाकर नीचे लिखते हैं 'जीवानां परस्पर उपग्रहो।' परस्पर उपकार करते हैं। उपकार करते हैं, उसकी व्याख्या ऐसी है नहीं। जहाँ-तहाँ ये चल रहा है। 'उपकार' का अर्थ निमित्तपने है, इतना ज्ञान कराने को उपग्रह अथवा उपकार, ऐसे दो शब्द लिये हैं। आहाहा! यहाँ तो परमात्मा ऐसे कहते हैं कि जीव अपने परिणाम को... परिणाम कहो या कर्म को या कार्य कहो। अपने कार्य से उत्पन्न होता है तथापि उसका अजीव के साथ, राग के साथ, कर्म के साथ, शरीर के साथ कार्यकारणभाव सिद्ध नहीं होता। ये जड़कर्म कार्य और आत्मा कारण, ऐसा सिद्ध नहीं होता। आहाहा! यह शरीर चलता है, ऐसी भाषा निकलती है, ये भाषा का निकलना कार्य और आत्मा कर्ता, ऐसा कभी सिद्ध होता नहीं। आहाहा!

उसका अजीव के साथ कार्यकारणभाव... यह तो कल कहा था न? आत्मा में अकार्यकारण नाम का गुण है। आत्मा में अकार्यकारण गुण है कि (जिससे) पर (द्रव्य) कर्ता और आत्मा की पर्याय कार्य, ऐसा तो होता नहीं, परन्तु राग कर्ता और निर्मल पर्याय कार्य ऐसा भी होता नहीं। सूक्ष्म बात है। समझ में आया? व्यवहाररत्नत्रय कर्ता और सम्यग्दर्शन निर्मलपर्याय कार्य, ऐसा कर्ता-कर्म (सम्बन्ध) है नहीं। बहुत (हुआ तो) आत्मा कर्ता और निर्मलपर्याय कर्म ऐसे उपचार से दो भेद करते हैं, परन्तु व्यवहार राग... सबका यह लेख आता है। व्यवहार... व्यवहार... व्यवहार... व्यवहार तो करो, व्यवहार करो, करते-करते पीछे छोड़ दो। आहाहा!

मुमुक्षु : पहले तो करना पड़ता है?

पूज्य गुरुदेवश्री : पहले और बाद में करे कौन? आहाहा! अपने परिणाम से उत्पन्न होनेवाला प्रभु (आत्मा है) और दूसरे परिणाम से उत्पन्न होनेवाला यह (दूसरा) द्रव्य है। परिणाम बिना का तो कोई द्रव्य है नहीं अथवा परद्रव्य अपने कार्य बिना का तो है नहीं। उसका (अपना) कार्य है, तो आत्मा अपना कार्य करता है और पर का भी कार्य करता है? तो कार्य बिना का द्रव्य हो गया। पर्याय बिना का द्रव्य हो गया। पर्याय बिना का द्रव्य होता ही नहीं कभी। छन्नालालजी! ऐसी बात है, भाई! आहाहा! आहाहा!

भगवान की वाणी कर्ता और आत्मा की ज्ञानपर्याय कार्य, ऐसा है नहीं। समझ में

आया? क्या कहते हैं? फिर से लेते हैं। वाणी जो भगवान की दिव्यध्वनि है, वह तो परमाणु की पर्याय अपने से उत्पन्न हुई है। वह भगवान से भी नहीं। भगवान की दिव्यध्वनि भगवान से भी नहीं (होती)। आहाहा! भगवान तो निमित्त कहने में आते हैं। लोकालोक को केवलज्ञान निमित्त कहने में आता है और केवलज्ञान में लोकालोक को निमित्त कहने में आता है। निमित्त कहने में आया, परन्तु निमित्त से हुआ है, ऐसी चीज़ है नहीं। केवलज्ञान लोकालोक को निमित्त है तो केवलज्ञान से लोकालोक उत्पन्न हुआ है? और लोकालोक केवलज्ञान में निमित्त है तो लोकालोक से केवलज्ञान की पर्याय उत्पन्न हुई है? यह सर्वविशुद्ध (अधिकार) में पाठ है। सर्वविशुद्ध (अधिकार) समयसार। अन्तिम अधिकार में है। केवलज्ञान लोकालोक को निमित्त है और लोकालोक केवलज्ञान को निमित्त है। सर्वविशुद्ध अधिकार में पीछे है। उसका अर्थ क्या? कि दूसरी चीज़ है, इतना ज्ञान कराया। केवलज्ञान उत्पन्न हुआ, तो ये लोकालोक उसका कारण—कर्ता और आत्मा का केवलज्ञान कार्य, ऐसा है कभी? और केवलज्ञान का कार्य यह लोकालोक को निमित्त है तो केवलज्ञान कर्ता और लोकालोक कार्य—ऐसा है? (नहीं)। आहाहा! ऐसी सूक्ष्म बात।

ये यहाँ कहते हैं। जीव अपने परिणाम से उत्पन्न होता है—कार्य तो करता है, ऐसे कहते हैं। कार्य किये बिना रहता है, ऐसा तो नहीं। कार्य करता है तो पर का भी कार्य करे तो उसमें क्या है? लोक में कहते हैं कि गोपाल एक गाय को चराता है तो हमारी गाय को भी ले जा। दो गाय चरावे, चार गाय चरावे... एक गाय को चरावे तो पाँच गाय को चरावे। अपना कार्य करता है तो पर का भी कार्य करे। कार्य करे बिना रहता है, तब तो पर का कार्य न करे, ऐसा कहते हैं। देखो! शब्द कैसा लिया है?

जीव अपने परिणामों से... परिणाम अर्थात् कार्य। सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र आदि परिणाम-कार्य। आत्मा का कर्ता नाम के गुण से कार्य होता है अथवा कर्मगुण से ये कर्म हुआ है। अपने में कर्मगुण है... कर्मगुण है, उस कारण से कर्म अर्थात् धर्म की वीतरागी पर्याय (हुई है)—कर्मगुण से कर्म हुआ है। आहाहा! ये अपने परिणाम से उत्पन्न होता है, तथापि—ऐसा होने पर भी... एक अपना कार्य करे बिना रहे और आप ऐसे कहो कि

पर का कार्य न करे (तब तो ठीक है)। परन्तु कार्य तो करता है। समझ में आया? आहाहा! सूक्ष्म बात है, भाई!

वीतराग सर्वज्ञ परमात्मा... अन्तर वस्तु आत्मा ही सर्वज्ञ वीतराग परमात्मा ही है। आहा! अपने परिणाम से उत्पन्न होता है, अपना कार्य करता तो है। कार्य किये बिना रहता नहीं, तो भी—तथापि पर का कार्य नहीं करता। ऐसा लिया न? 'तथापि' लिया न? ऐसा होने पर भी... तथापि नाम ऐसा होने पर भी... अपना सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र का कार्य आत्मा अपने परिणाम से करता है। उसमें गुण हैं। उसके गुण तो ध्रुव हैं, गुण का परिणमन नहीं होता। गुण तो अपरिणमनस्वभावी, अपरिणामी पारिणामिकभाव से त्रिकाल है। सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र का परिणाम, वह परिणमन है। तो उस परिणमन का कर्ता आत्मा अपने परिणाम का कर्ता है। वह परिणाम कर्ता का कार्य है। राग नहीं, शरीर नहीं, वाणी नहीं, स्त्री नहीं, कुटुम्ब नहीं, धन्धा नहीं। आहाहा! पैसेवाले को यह सब कठिन पड़े। पैसे ऐसे इतने दिये, संग्रह किया, इतना इकट्ठा किया। दुकान के गल्ले पर बैठकर, ग्राहक का ध्यान रखनकर...

मुमुक्षु : अहंकार है।

पूज्य गुरुदेवश्री : अहंकार है... अहंकार है। परद्रव्य और तेरे द्रव्य में अत्यन्त अभाव है। तो अभाव (होने पर भी) पर का कार्य करे, (ऐसे) कैसे बने प्रभु? आहाहा! तेरे अहंकार का नाम मिथ्यात्व है। आहाहा!

अपने कार्य से उत्पन्न होता है, **तथापि उसका अजीव के साथ कार्यकारणभाव सिद्ध नहीं होता...** ऐसा सिद्ध किया कि जब क्रमबद्ध का निर्णय करते (हुए) अपने ज्ञायकभाव का निर्णय हुआ, तो अपने में सम्यग्दर्शन-ज्ञान पर्याय उत्पन्न हुई। यह पर्याय है, उसका कर्ता तो आत्मा है। उसमें व्यवहाररत्नत्रय राग कर्ता और निर्मल पर्याय कार्य—ऐसा है? कि ऐसा है नहीं। एक बात। निर्मल पर्याय कर्ता और राग कार्य—ऐसा है? कि ऐसा है नहीं। राग का कार्य भिन्न है। आहाहा! समझ में आया? अपनी चीज़ को जानकर जो सम्यग्दर्शन-ज्ञान हुआ, उससे उत्पन्न होता हुआ वो परिणाम (रूपी) कार्य करता है। यह कैसे? कि यह परिणाम का कार्य पूर्व पर्याय थी तो उत्पन्न हुआ?

जैसे केवलज्ञान हुआ, तो मोक्षमार्ग था तो केवलज्ञान उत्पन्न हुआ? कि नहीं। इस मोक्षमार्ग का तो व्यय होता है। ये (जीव) तो सीधा अपने केवलज्ञान पर्याय से उत्पन्न होता है। आहाहा! समझ में आया? ऐसी बातें अब। जहाँ मोक्षमार्ग से भी मोक्ष नहीं, तो राग से, निमित्त से और पर से तो कहाँ रहा? आहाहा!

अजीव के साथ... यहाँ 'अजीव के साथ' (शब्द) लिया है, परन्तु उसका अर्थ यहाँ ऐसा भी लेना कि इस जीव के अतिरिक्त दूसरे जीव हैं, वे इसकी अपेक्षा से अजीव हैं। उनका कार्य भी आत्मा कर सकता नहीं। आहाहा! अजीव का कर्म-कार्य तो नहीं... इस जीव के अतिरिक्त दूसरे जीव हैं, वह अजीव हैं। अपनी अपेक्षा से अजीव हैं, उनकी (स्वयं की) अपेक्षा से जीव हैं। आहाहा! यहाँ तो अजीव का निषेध किया, तो फिर (अन्य) जीव की पर्याय का कर्ता (बनकर) कर सकता, ऐसा है, आता है या नहीं? परजीव का कार्य कर सकता है, ऐसा आता है या नहीं? ये आत्मा के अतिरिक्त परवस्तु सब (अजीव हैं अर्थात्) ये जीव नहीं। यह जीव अपने सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र के परिणाम से उत्पन्न होता है। आहाहा! परजीव में सम्यग्दर्शन उत्पन्न होता है तो उसमें (इस) आत्मा की पर्याय कर्ता और सम्यग्दर्शन उसका कार्य—ऐसा है नहीं। आहाहा!

तथापि... आहाहा! **उसका अजीव के साथ कार्यकारणभाव सिद्ध नहीं होता...** क्यों? कारण देते हैं। **क्योंकि सर्व द्रव्यों का अन्य द्रव्य के साथ उत्पाद्य-उत्पादकभाव का अभाव है...** क्या कहते हैं? सर्व द्रव्यों के साथ... उत्पाद्य अर्थात् उत्पन्न होनेयोग्य कर्म (-कार्य) और पर आत्मा उत्पादक—उत्पाद्य और उत्पादक, ऐसा है नहीं। आहाहा! हाथ की ऐसे ऊपर होने की योग्यता उत्पाद्य और आत्मा का विकल्प उत्पादक अथवा ज्ञान में आया कि मुझे हाथ को ऊपर करना है, ऐसा ज्ञान उत्पादक और हाथ ऊपर हुआ, यह उत्पाद्य—उसका अभाव है। आहाहा! भभूतमलजी! यह भभूति दूसरी है। यह सब तो धूल की भभूति है। आहाहा! भगवान! तेरा मार्ग, प्रभु! कोई अलौकिक है। आहाहा!

अकेला सुनकर—सुना और उससे ज्ञान की पर्याय हुई, कहते हैं कि सुनना... सुनने की पर्याय कर्ता और ज्ञानपर्याय कार्य—ऐसा है नहीं। वह ज्ञानपर्याय भी परलक्ष्यी है, ये सम्यग्ज्ञान नहीं। क्या कहा? सुनने से अन्दर जो ज्ञान होता है, उसकी पर्याय तो

उसके कारण से होती है, सुनने से नहीं। परन्तु यह ज्ञान जो उत्पन्न हुआ, सूत्र का निमित्त है, सुनने में, तो ये ज्ञान भी सम्यग्ज्ञान नहीं। क्योंकि परलक्ष्य से हुआ है। सम्यग्ज्ञान का कार्य तो अपने द्रव्य के आश्रय से होता है। आहाहा! शास्त्र का ज्ञान कर्ता और आत्मा का सम्यग्दर्शन कार्य—ऐसा है नहीं। आहाहा! कहाँ ले जाना है?

प्रभु! तेरी स्वतन्त्रता... तेरे में प्रभुता नाम का गुण है। ४७ शक्ति है न? उसमें प्रभुत्व नाम का एक गुण है—ईश्वर होने का गुण है। ईश्वर होने का एक गुण है, सर्व गुण में ईश्वरगुण का रूप है। आहाहा! अनन्त... अनन्त... गुण ईश्वररूप हैं। ईश्वर कोई पर की आशा नहीं करते। आहाहा! अखण्ड प्रभुता से शोभायमान, स्वतन्त्रता से, अपने प्रताप से प्रत्येक गुण की पर्याय अपनी अखण्ड स्वतन्त्रता से पर्याय से उत्पन्न होती है। आहाहा! कोई निमित्त कारण से तो नहीं, परन्तु पूर्व की पर्याय से यह उत्पन्न हुई, ऐसा भी जिसमें नहीं। आहाहा!

यहाँ तो सीधे ज्ञायकभाव से आत्मा परिणाम में उत्पन्न होता हुआ कार्य करता है तो दूसरे के कार्य में उसकी मदद हो, ऐसा है नहीं। समझ में आया? आहाहा! यह लकड़ी ऊँची होती है, उसमें कर्ता (गुण) है—उसमें भी कर्ता नाम की शक्ति है, उसके कारण से कार्य होता है। अँगुली से नहीं। दुनिया संयोग से देखती है, परन्तु उसके स्वभाव से (कार्य हुआ) है, ऐसा नहीं देखती। आँख से देखते हैं कि अँगुली है या नहीं? परन्तु अँगुली तो संयोग है, पर है। समझ में आया?

इसी तरह सुनने से ज्ञान हुआ... वह भी पर है। सुनना परचीज़ है, उससे ज्ञान तेरे में हो? यह तो अमृतचन्द्राचार्य ने कहा है कि यह टीका मैंने की है, ऐसे मोह से न नाचो। प्रभु! मैं तो ज्ञानस्वरूप से मग्न हूँ। मैं विकल्प में भी आया नहीं, तो टीका की क्रिया में कहाँ से आऊँगा? आहाहा! समयसार, प्रवचनसार, नियमसार, इष्टोपदेश में प्रत्येक में बाद में है। आहाहा! ऐसी टीका! कहते हैं कि ये तो शब्द की पर्याय से कार्य हुआ है। शब्द परमाणु में कर्ता-कर्म शक्ति है, उससे पर्याय का कार्य हुआ है, मेरे से नहीं। मैं टीका का करनेवाला हूँ, ऐसे मोह से न नाचो और मेरी टीका सुनने से तुमको ज्ञान होता है, ऐसे न नाचो। आहाहा! उसमें है। मेरी टीका सुनने से तुझे ज्ञान होता है

ऐसे न नाचो। आहाहा! है या नहीं अन्दर? अन्त के श्लोक में। प्रवचनसार में विशेष है... प्रवचनसार में विशेष है। आहाहा! है प्रवचनसार? (श्लोक २१)।

'वास्तव में पुद्गल ही स्वयं शब्दरूप परिणमित होते हैं, आत्मा उन्हें परिणमित नहीं कर सकता।' आत्मा, शब्द को परिणमा सकता नहीं। 'उन्हें ही वास्तव में सर्व पदार्थ ही स्वयं ज्ञेयरूप-प्रमेयरूप परिणमित होते हैं, शब्द उन्हें ज्ञेय बना—समझा नहीं सकते।' यह शब्द आया तो तुझे ज्ञान की पर्याय उत्पन्न हुई, ऐसे न नाचो। प्रभु! आहाहा! ऐ मणिभाई! शब्द जो परिणमते हैं, यह पुद्गल की पर्याय से परिणमते हैं, आत्मा से नहीं। एक बात। उसको परिणमा सकता नहीं—परिणमा सकता नहीं। तथा सर्व पदार्थ स्वयं ज्ञेयपने परिणमते हैं। वह अपनी पर्याय में जानना होता है, वह अपने से होता है। सुनने से होता है, कान में शब्द पड़ा तो ज्ञान हुआ—ऐसे न नाचो, प्रभु! ऐसी पराधीनता नहीं है। आहाहा! कपूरचन्दजी! ऐसी बात है। आहाहा! शब्द, शास्त्र...

कहते हैं, यह तो विकल्प है। और शास्त्र से ज्ञान होता है, ऐसे न नाचो। ज्ञान की खान तो तुम हो। तुम्हारे से ज्ञान कर्ता होकर ज्ञान की पर्याय कर्म अर्थात् कार्य होता है। तो सुनने से होता है, ऐसा न मानो। आहाहा! .... यह तो आवे, परन्तु ऐसी कठिन बात है। भाषा तो ऐसी ही आवे कि आगम का अभ्यास करो, देव-गुरु की श्रद्धा करो, सुनो, गुरु की सेवा करने से—गुरु की चरणसेवना करने से समकित होता है—ऐसा भी आता है। यह निमित्त का कथन है। समझ में आया? आहाहा! 'शब्द उन्हें ज्ञेय बना—समझा नहीं सकते, आत्मा सहित विश्व वह व्याख्येय...' आत्मा सहित सम्पूर्ण विश्व व्याख्येय—व्याख्या करनेयोग्य—समझानेयोग्य '(और) वाणी की गुंथन वह व्याख्या—समजूती और अमृतचन्द्रसूरि वे व्याख्याता—व्याख्या करनेवाले—समझानेवाले—इस प्रकार जन मोह से मत नाचो...' आहाहा! अर्थ में से ऐसे ले कि यह तो निर्मानी हैं तो निर्मानता से बात करते हैं। निर्मानी हैं, परन्तु निमित्त कर्ता है ही नहीं। आहाहा!

बाद में है। २१ (श्लोक) में। प्रवचनसार में श्लोक बहुत थोड़े हैं—कलश थोड़े हैं। समयसार में २७८ हैं, नियमसार में बहुत हैं कलश। इसमें थोड़े हैं। २२ कलश हैं, पूरे प्रवचनसार में कलश २२ हैं। समयसार में २७८ कलश हैं, नियमसार में बहुत हैं।

यहाँ कहते हैं कि अमृतचन्द्रसूरि व्याख्याता—समझानेवाले हैं, ऐसे मोह से जन ना नाचो। आहाहा! समझानेवाले को ऐसा हो जाये कि मैं समझाता हूँ तो उसे समझ में आता है।

मुमुक्षु : आप समझाते हैं महाराज! तो हम समझते हैं।

पूज्य गुरुदेवश्री : ऐसी बात है नहीं, ऐसा कहते हैं। मार्ग बहुत अलौकिक है, भाई! आहाहा! यह विकल्प का कर्ता आत्मा नहीं। आहाहा! भगवान ज्ञानस्वरूप यह क्या विकल्प-राग, विकार, दु:ख, आकुलता (को उत्पन्न करे)? आनन्द का नाथ आकुलता को उत्पन्न करे? आहाहा! विकल्प जो समझाने का है, यह भी आकुलता, दु:ख है। आहाहा! समाधिशतक में वहाँ तक लिया है, आहाहा! मैं पर को समझाता हूँ, यह भी उन्मत्तता है, गहलता है। समाधिशतक। पागलपना है। आहाहा! क्योंकि उसको तेरे से समझ में नहीं आता, उसको उससे (-स्वयं से) समझ में आता है। बात बहुत कठिन। पूरी दुनिया से अन्तर है। अभी के तो पण्डित तो हम ऐसा करे...

एक बार ऐसा सुना था। ५० पण्डित यहाँ के विरोध में इकट्ठे हुए थे इन्दौर में। ५० पण्डितों ने ऐसा निर्णय किया कि परद्रव्य का करे नहीं, ये दिगम्बर (जैन) नहीं। यहाँ से ना करते हैं न कि परद्रव्य (का कर सके नहीं)। करो प्रभु! तुम तो प्रभु हो अन्दर में। भूल होती है पर्याय में। 'जामे जितनी बुद्धि है उतनो दियो बताया, वांको बुरो न मानिये और कहाँ से लाये।' आहाहा! सूक्ष्म बात है, भाई! यहाँ भगवान अमृतचन्द्राचार्य कहते हैं कि न फूलो। आहाहा! ओहो! टीका सुनी उससे मेरे को ज्ञान हुआ, ऐसा नहीं होता। ऐसे फूलो नहीं। आहाहा! 'स्याद्वादविद्या के बल से विशुद्ध ज्ञान की कला द्वारा...' स्याद्वादविद्या के बल से विशुद्ध ज्ञान की कला... 'यह एक पूरे शाश्वत् स्वतत्त्व को प्राप्त करो...' आज से ही प्राप्त करो। आहाहा! ऐसा पाठ है। दिगम्बर सन्त की वाणी कोई अलौकिक है। आज ही प्राप्त करो। पीछे करूँगा, (ऐसी भावना है) तो तुझे रुचि नहीं। जिसकी रुचि है, उसका वीर्य उस ओर गति किये बिना रहेगा नहीं। आहाहा! 'रुचि अनुयायी वीर्य।' धन्नालालजी! आहाहा! जिसको रुचि है, यह वायदा करे, ऐसा होता नहीं। आहाहा! 'वायदा' कहते हैं? हिन्दी में क्या कहते हैं? (वादा... वादा।) वायदा करे कि पीछे... पीछे... (-बाद में)। पीछे में पीछे रहेगा... पीछे में पीछे रहेगा। आहाहा!

'एक पूरा शाश्वत् स्वतत्त्व को प्राप्त कर...' आहाहा! प्रभु! 'एक पूरा शाश्वत् स्वतत्त्व...' भाषा देखो! एक पूर्ण परिपूर्ण शाश्वत् टंकोत्कीर्ण शाश्वत् स्वतत्त्व... यह स्वतत्त्व यहाँ आया। आहाहा! 'उसे प्राप्त करके आज (जानो) अव्याकुलपने नाचो।' आहाहा! एक अखण्ड शाश्वत् चैतन्य प्रभु... आहाहा! उस तरफ का लक्ष्य करके प्राप्त करो। यह करनेयोग्य है। आहाहा! 'आज से (जनों) अव्याकुलपने...' प्रभु! तू तेरी चीज़ में आज ही जो अन्दर में एकाग्र होगा तो आज ही अर्थात् उस काल में ही तुझे आनन्द आयेगा। यही कहते हैं, देखो! अव्याकुलपने परिणमो। आहाहा! अतीन्द्रिय आनन्दपने परिणमो प्रभु! आहाहा! यही तेरा कार्य है। ये आत्मा अपने परिणाम से उत्पन्न होता है। समझ में आया? आहाहा! कठिन बात है भाई! यह तो, 'मैं करूँ... मैं करूँ... यही अज्ञान है, शकट का भार ज्यों श्वान उठाये।' बैल गाड़ी को चलाता हो, उसके नीचे... में कुत्ता का सिर छुए तो (उसे लगता है कि) मेरे से गाड़ी चलती है। ऐसे दुकान में बैठे तो मेरे से धन्धा चलता है, (ऐसे मानता है तो) कुत्ते जैसा है। सेठ! यहाँ तो यह बात है। सेठ! सम्प्रदाय की दृष्टि छोड़कर यहाँ आये हैं न कि क्या कहते हैं, यह सुनने को? मार्ग तो, प्रभु! कोई अलौकिक है।

यह यहाँ कहा कि **कार्यकारणभाव सिद्ध नहीं होता...** यह शब्द कारण और ज्ञान की पर्याय कार्य—ऐसा सिद्ध नहीं होता। आहाहा! समयसार में आता है न? कि मैं पर को बन्ध करा दूँ, मैं पर को वीतराग करा दूँ... बन्ध अधिकार में है। पर को मैं मोक्ष करा दूँ। मूढ है। उसकी वीतरागता से मोक्ष होगा और उसके राग से, अज्ञान से संसार में रहेगा। तुम उसको वीतरागता दे सकते हो? आहाहा! बन्ध अधिकार में है। मैं पर को बन्ध और मोक्ष करा दूँ... आहाहा! प्रभु! तू क्या करता है? प्रभु! तू तो ज्ञानस्वरूप है न? ज्ञानस्वरूप में विकल्प उठते हैं ये, प्रभु! दुःखरूप है न? तो तुझे दूसरे का क्या करना है? आहाहा! ऐसा अभिमान कहाँ तक तुझे रखना है? आहाहा! जब तक मैं पर का कर सकता हूँ, (ऐसा) अभिमान है, मिथ्यात्व है, तब तक तू स्वसन्मुख नहीं हो सकता। आहाहा! भाषा समझ में आती है, सेठ? आहाहा! सूक्ष्म बात है, प्रभु!

उत्पाद्य-उत्पादकभाव का अभाव है। क्या कहा? **सर्व द्रव्यों का... सर्व द्रव्यों**

का अन्य द्रव्य के साथ... अरिहन्त का द्रव्य उत्पादक और सुननेवाले का ज्ञान उत्पाद्य (अर्थात्) उत्पन्न हुआ—ऐसा अभाव है। है या नहीं अन्दर? उत्पाद्य और उत्पादक। उत्पाद्य—उत्पन्न होनेवाला कार्य और उत्पादक दूसरी चीज़—ऐसा उत्पाद्य—उत्पादक का अभाव है। जड़ की पर्याय उत्पाद्य—होनेयोग्य और आत्मा उत्पादक—ऐसा अभाव है। आहाहा! वाणी की पर्याय उत्पाद्य और आत्मा उसका उत्पादक—(ऐसा) अभाव है। आहाहा!

मुमुक्षु : कर्मशास्त्र में तो दूसरा ही लिखा है?

पूज्य गुरुदेवश्री : क्या लिखा है? यह तो पहले बताया प्रवचनसार में। टीका हमने की ही नहीं। हम कहाँ हमारी पर्याय को छोड़कर पर में जायें और करें? आहाहा! कठिन बात, बापू! जगत से मिलान खाना मुश्किल। आहाहा! जन्म-मरण से रहित होने की पद्धति कोई अलौकिक है।

बाहर से प्रसन्न हो जाये, खुशी हो जाये और दूसरे को... अष्टपाहुड़ में कहा है और तारणस्वामी में कहा है कि जनरंजन, ऐसी अनुकूल बात करे कि जनरंजन हो जाये। अष्टपाहुड़ में कहा है कुन्दकुन्दाचार्य को। आहाहा! प्रभु! जनरंजन की अनकुल बात तुम करोगे, तो तुझे भ्रमणा है। पूरी दुनिया खुश हो जाये। भैया! एक-दूसरे की मदद करो। वहाँ गरीब ओशियाणो मनुष्य हो तो कहे, महाराज ने बहुत अच्छा कहा, हमें मदद की। हम गरीब मनुष्य हैं तो हमको मदद करने को सेठ को कहा। प्रसन्न हो जाये। शुकनचन्दजी! आहाहा! ऐई!

बहुत लोगों के पत्र आवें हमारे पास एकान्त कि हम निवृत्त हो गये हैं तो यहाँ हमको रखो। यहाँ रखे कौन? ऐसी ... प्रवृत्ति में पड़े कौन? साधु का भी लेख आता है कि हमें वहाँ आना है। भव्यसागर दिगम्बर साधु है न?

मुमुक्षु : आप व्यवस्था करते नहीं?

पूज्य गुरुदेवश्री : कुछ करते नहीं। आहाहा! भव्यसागर के पत्र बहुत आये। दिगम्बर साधु जालना में थे। स्थानकवासी का आचार्य था आनन्दसागर, उसको (बहुत लोग) वन्दन करने आते थे। आनन्दसागर स्थानकवासी साधु था। आहाहा! आनन्दसागर,

नहीं ? स्थानकवासी। क्या कहे ? आनन्दऋषि। यह भव्यसागर के पास आता था। नग्न मुनि है तो वहाँ आता था। तो कहते थे कि हमारे पास आता है...

यहाँ तो पत्र ऐसे लिखा है हमको कि तुम्हारी बात निकली तो कहते हैं कि भैया! हम साधु नहीं, हम मुनि नहीं। हमने तो समकित बिना का वेश ले लिया है। अब हमारा वहाँ आने का भाव है। तुम इतना लिखो कि आओ। हम तो इतना भी लिखते नहीं कि आओ या जाओ। बहुत पत्र आये थे। स्वामी! इतना लिखो कि आओ। तुम आओ तो कहाँ ठहराना ? इसमें मैं क्या प्रवृत्ति करूँ ? उसको आहार-पानी का तो हो जायेगा। भले न दे, हो जायेगा। परन्तु यहाँ करे कौन ? परन्तु यहाँ करे कौन ? यहाँ आवे तो कहाँ रखे ? फिर तुमको कौन रखे और कहाँ रखे ? यहाँ कौन करे ? बापू! यहाँ कोई करे नहीं।

एक स्थानकवासी साधु आया था जवान। उसकी बहिन ने दीक्षा ली, उसमें कोई भूल हो गयी थी। यह उकताहट आ गया था। आया, कहे, मुझे यहाँ रखो। हम तो किसी को रखते नहीं। तुम्हें कहाँ रखना ? मकान कहाँ... चला गया। सुबह में आया था, दोपहर में गया। जवान था, मारवाड़ी। पत्र तो बहुत आते हैं एकान्त, परन्तु यहाँ कौन करे ? बापू! ये तो उपदेश का विकल्प आता है और वाणी निकलती है, आती है। यहाँ रखकर उपाधि कौन (बहोरे) ? यहाँ देखो! क्या कहा ?

सर्व द्रव्यों का अन्यद्रव्य के साथ... सर्व द्रव्य लिये न ? जीव, अजीव,— परमाणु, धर्मास्ति आदि कोई भी तत्त्व। उत्पाद्य—उत्पन्न होनेयोग्य और उत्पादक—उत्पाद करनेवाला—ऐसा (सम्बन्ध) है नहीं। सर्व द्रव्यों में उत्पाद्य वह और उत्पादक दूसरा— ऐसा है नहीं। उत्पाद्य वह और उत्पादक भी वह। वास्तव में उसकी पर्याय उत्पन्न होती है, उसका कारण भी वह और कार्य भी वह—पर्याय कारण और पर्याय ही कार्य—ऐसा है प्रभु! आहाहा! इसमें निमित्त उत्पादक और नैमित्तिक उत्पाद्य—उसका अभाव है। है ? उत्पाद्य... उत्पाद्य अर्थात् उत्पन्न होनेयोग्य कार्य और उत्पादक—उसको उत्पन्न करनेवाला। **सर्व द्रव्यों का अन्यद्रव्य के साथ...** आहाहा! क्या बाकी रहा इसमें ?

देव-गुरु उत्पादक और (शिष्य की) सम्यग्दर्शन की पर्याय उत्पाद्य—(ऐसा) है

नहीं। आहाहा! कठिन बात है, भाई! इस शिक्षण शिविर में आया तो शिक्षण यही बात करे न। पण्डितजी! आहाहा! अभाव है... **उसके** कारण-कार्यभाव **सिद्ध न होने पर...** परद्रव्य उत्पाद्य और दूसरा परद्रव्य उत्पादक, ऐसा सिद्ध न होने पर **जीव के अजीव का कर्तृत्व सिद्ध नहीं होता।** अजीव (की पर्याय) जीव का कार्य... अजीव की पर्याय जीव का कार्य, ऐसा सिद्ध होता नहीं। समझ में आया? क्या आया? **अजीव के जीव का कर्मत्व...** अजीव को जीव का कर्मत्व—कार्य ऐसा सिद्ध नहीं होता। **अजीव के जीव का कर्मत्व...** अजीव को जीव का कार्य(पना)... अजीव को जीव का कार्य(पना)... है या नहीं अन्दर? अजीव को कर्मत्व... पश्चात् ऐसा लेना। तीसरा शब्द है, अजीव को जीव का कर्मत्व सिद्ध नहीं होता। आहाहा! समझ में आया? आहाहा!

सम्यग्दृष्टि जो कुम्हार हो, तो घड़ा बनने (के काल में) 'घड़ा मैं बनाता हूँ' ऐसा विकल्प उठता ही नहीं। कुम्हार सम्यग्दृष्टि होता है या नहीं? स्त्री सम्यग्दृष्टि हो वह, रोटी बनाती हूँ, सब्जी बनाती हूँ—ऐसा मानती नहीं। आहाहा! सम्यग्दृष्टि जीव कार्य में (निमित्त की) उपस्थिति देखे तो भी उससे बनता है, ऐसा वे मानते नहीं। आहाहा! बहुत कठिन काम! रोटी, दाल, भात, सब्जी करना, पूड़ी करना, वड़ी, पापड़, सेव... होशियार महिला हो, हाथ हलवो हो तो बराबर हो। भ्रमणा है तेरी। आहाहा! **जीव के अजीव का कर्तृत्व सिद्ध नहीं होता।** अजीव को जीव का कार्य, ऐसा सिद्ध नहीं होता। है? आहाहा! **और उसके (-अजीव के जीव का कर्मत्व) सिद्ध न होने पर, कर्ता-कर्म की अन्यनिरपेक्षतया...** आहाहा! सिद्धि होने से... जरा उसकी विशेष व्याख्या है। निरपेक्ष आया न? जरा विशेष कहेंगे।

(**श्रोता :** प्रमाण वचन गुरुदेव!)